अध्याय 1

प्रस्तावना

भारत एक कृषि प्रधान देश है। भारत की लगभग 70% जनता खेती या खेती संबंधित रोजगार पर आधारित है। खेती केवल आर्थिक व्यवस्था ही नहीं बल्कि वह सामाजिक जीवन के हर एक अंग को स्पर्श करने वाली व्यवस्था है।

स्वातंत्र्योत्तर काल में कृषि क्षेत्र में बहुत से परिवर्तन हुए हैं। पंचवर्षीय योजना के माध्यम से खेती के विकास को महत्व दिया गया। खेती उत्पादन और उत्पादकता बढ़ाने के लिए हुई हरित क्रांति ने कृषि व्यवस्था का रूप ही बदल दिया है। देश में अनाज की आवश्यकता मिटाने के साथ ही कृषि क्षेत्र में नए संशोधनो के पालन का कार्य किया गया।

1991 में शुरू हुए उदारीकरण के पूँजीवादी विकास प्रकिया में यह सब परिवर्तन हुए। अंतरराष्ट्रीय नाणोनिधि, विश्व बैंक, विश्व व्यापार संगठन, बहुराष्ट्रीय कंपनियां इनके साम्राज्यवादी नियंत्रण तथा दबाव के नीचे सरकारी योजनाओं में प्रतिगामी बदलाव हुए हैं। जिसके प्रतिबिंब किसान के शोषन व्यवस्था में दिखाई देते हैं।

भारत में विविध राज्यों में किसान आत्महत्याएँ 1980 के आसपास शुरू हुई। पिछले दो दशक में कृषि संलग्न क्षेत्र से सार्वजनिक निवेश का प्रमाण घट गया

है। निवेश में हुई कमी से आर्थिक हानि बढ़ गई। जिससे आधारभूत सुविधाओं के निर्माण का प्रतिशत घट गया। कृषि क्षेत्र में

विनिमय की कीमतें बढ़ने से लाभ की दर घटी। इसका परिणाम यह हुआ कि 40 प्रतिशत किसान खेती को छोड़कर दूसरा अच्छा व्यवसाय करने का सोचने लगे। (NSSO 2005)

सर्वप्रथम वर्ष 1986 में केरल में ऋणग्रस्तता की शुरूवात हुई। बाद में पंजाब, आंध्रप्रदेश, तमिलनाडु, महाराष्ट्र और कर्नाटक के किसानों ने उनका अनुकरण किया। यह राज्य कृषि क्षेत्र में प्रगत मानी जाती है। पंजाब में भी किसान आत्महत्या का प्रमाण 80% है। केंद्र और राज्य सरकार ने जाहिर किए कर्जा माफी के बाद भी कृषि क्षेत्र पर से संकट टला नहीं। इसका अर्थ, इस पैकेज का किसान को कुछ नफा नहीं हुआ। 1980 दशक के उत्तरार्ध में शुरू हुई यह शोकांतिका जागतिकीकरण के काल में नष्ट हुयी। दिसंबर 2002 तक 15804 किसान आत्महत्याएं हुई। जिनमें 80 प्रतिशत किसान कर्जदार थे। कर्ज की अधिकता एवं अन्य आर्थिक कारणों से किसानों के स्वाभिमान को लगा धक्का आत्महत्या का प्रमुख कारण था। और वे आत्महत्या की ओर प्रवृत्त हुए। (साईनाथ 2006)

किसानों की बढ़ते प्रमाण में हो रही आत्महत्या, सरकार ने जाहिर किए पैकेज को मिला बहुत कम प्रतिसाद, ग्रामीण पायाभूत सुविधाओं का अभाव,

विस्तार और प्रशिक्षण केंद्रों की अनुपलब्धता यह बातें भारत में कृषि क्षेत्र में बहुत भयानक दर्शन दिखा रहे हैं।

देश के विभिन्न राज्य में हुए किसान आत्महत्याओं को सामाजिक और संरचनात्मक परिवर्तन कारणीभूत है। यह हमें मानना होगा। इनके जमीन धारण पदधंत में हुआ बदल, अनाज से नकदी पिक ऐसी बदलती पिक रचना, विश्व बाजार पेठ में होनेवाली स्पर्धा, बढ़ता हुआ उत्पादन खर्चा, योग्य कीमत का अभाव, ऋणग्रस्तता, विभक्त कुटंब पद्धति आदि का समावेश होता है।

महाराष्ट्र में किसान आत्महत्याएँ

सुवर्णमहोत्सव मनाने वाले महाराष्ट्र में 1997 से 2010 के शुरूवात तक लगभग 50 हजार किसानों ने आत्महत्याएँ की हैं। उसमें से ज्यादा-से-ज्यादा आत्महत्याएँ विदर्भ में हुई है। 1991 से खाजगीकरण, उदारीकरण और जागतिकीकरण और विशेषत: 1995 में हुए गॅट करार के वजह से आयात खुली करने से खेती माल की कीमते कम होने से भारतीय किसान संकट में जकड़ गया है। नकदी फसल विशेषत: कपास के क्षेत्र में आणीबाणी की परिस्थिति निर्माण हुई। महाराष्ट्र, आंध्रप्रदेश, कर्नाटक, केरल इन राज्यों में बहुत भारी संख्या में किसान ने आत्महत्या की है। जिस राज्य के किसान मुख्यत: घर की आवश्यकता तथा जीवननिर्वाह के लिए खेती करते हैं ऐसे मागास राज्य से पश्चिम बंगाल में आत्महत्या का प्रश्न गंभीर नहीं बना। जहाँ पंजाब जैसे सधन राज्य में आत्महत्या हो रही है।

1995 साल में महाराष्ट्र में कुल मिलाकर 6882 पुरुष और 4984 स्त्रियों की आत्महत्या की नोंद की गई है। इसमें किसान आत्महत्याओं की संख्या अनुक्रमे 978 और 105 थीं। मतलब आत्महत्या करने वाले कुल पुरुषों में किसान का प्रमाण 14 प्रतिशत था। मगर 1996 से किसान आत्महत्या बढ़कर 2000 साल में 3022 और 2004 में 4147 पुरुष किसानों ने आत्महत्या की। पुरुषों में कुल आत्महत्याओं में यह प्रमाण 24.6% और 38.4% इतना बढ़ गया। 1995 से 2004 के दरम्यान महाराष्ट्र में 28095 किसानों की आत्महत्या दर्ज हुई। 2005 साल में 3926 और 2006 में 4453 अर्थात 2006 के आखिर में 36428 किसानों की आत्महत्या दर्ज की गई। इसमें भी स्त्री किसानों का प्रमाण 15 प्रतिशत था।

महाराष्ट्र में एक लाख पुरुष किसान के पीछे आत्महत्या का प्रमाण 1995 साल में 16 प्रतिशत था। वह 2004 में 53 प्रतिशत हो गया। कुल पुरुषों में ये प्रमाण 2004 साल में 20 प्रतिशत था। जिले के हिसाब से विभाजन किया तो 2004 में यह प्रमाण सबसे ज्यादा अमरावती (213), बुलढाणा (172), अकोला (125), वर्धा (116), यवतमाल (112), जलगांव (99), नांदेड (87) दिखाई दिया। पश्चिम महाराष्ट्र में वह प्रमाण 33 प्रतिशत था।

वर्ष 2004 में ऑल इंडिया बायोडायनॅमिक अँन्ड ऑरगॉनिक फार्मिंग एसोसिएशन ने इन आत्महत्या बाबात चिंता व्यक्त करने वाला पत्र मुंबई उच्च न्यायालय को लिखा। जनहित याचिका क; 124 (Public Interest Litigation)

करके वह दावा 2004 साल में किया गया। न्यायालय ने तब मुंबई टाटा समाजविज्ञान संस्थाओं को आत्महत्या के समस्याओं का अध्ययन करके विवरण तैयार करने के लिए आदेश दिया। क्हाड, वर्धा, नागपुर, जलगांव, जालना, उस्मानाबाद, बीड और हिंगोली जिलों से 36 परिवार के तरफ से प्राप्त की गई जानकारी के आधार पर संस्था ने अहवाल तैयार किया और 15 मार्च, 2005 को न्यायालय में प्रस्तुत किया।

मुंबई के इंदिरा गांधी इंस्टीटयूट ऑफ डेव्हलपमेंट रिसर्च इस संस्था ने 2005 साल को वर्धा, यवतमाल, वाशिम जिले के आत्महत्या ग्रस्त 116 परिवारों का अध्ययन किया। आत्महत्या पर परिसंवाद लिया और ऑगस्ट 2005 में मंत्रालय में मुख्य सचिव तथा उसके सदस्यों के साथ इस अहवाल पर चर्चा की और अंतिम अहवाल 26 जनवरी 2006 को तैयार किया। इसके अलावा अमरावती विभागीय आयुक्त ने 2006 को व-हाड और वर्धा में से 771 किसान आत्महत्याओं का अध्ययन किया। वर्ष 2006 में यह छह जिले में से किसानों का व्यापक सर्वेक्षण किया। सदस्यों ने यवतमाल जिले में 148 परिवारों का सर्वेक्षण किया। इसके अलावा अन्य संशोधक वृत्तपत्र, वृत्तपत्रक आदि इन्होंने किया जिसका अध्ययन निम्नानुसार है :

	वर्ष	राज्य में कुल किसानों की आत्महत्या	वर्धा जिले में आत्महत्या की संख्या
Source : Maswe report on farmer suicide in maharaste (Nov. 2006)	2001	51	03
	2002	122	24
	2003	173	14
	2004	622	29
	2005	575	25
	2006	1296	154
		2839	250

आत्महत्याओं के कारण :

उपर्युक्त अध्ययन के निष्कर्ष से यह दिखाई दिया की, आत्महत्याओं का प्रमुख कारण कर्जा का असहीन बोझा, वसूली के लिए तगादा, जमीन पर कब्जा, आदि कर्जा का बोझा बढ़ने का प्रमुख कारण खाद, कीटनाशक इनकी बढ़ती आवश्यकता और बढ़े हुए भाव इस कारण बढ़ा हुआ खेती खर्चा और गिरे हुए खेती माल के भाव, वैयक्तिक कर्जा पर बढ़ी हुई निर्भरता, बी.टी. कपास बाबत फसाना आदि और छोटे किसान में और अनुसूचित जाति, जनजातियाँ ऐसे पद दलितों में आत्महत्या का प्रमाण ज्यादा दिखाई दिया। आत्महत्या हुई इसी संभाग में अन्य परिवार की तुलना करते समय यह दिखाई दिया कि जाती,

कुटुंब आकार, जमीन धारणा इस बाबत इन दो गुटों में लक्षणीय अंतर नहीं है। परंतु कर्जा की थकीत रकम आत्महत्या हुई परिवारों में सरासरी 38000 रुपए और अन्य कुटुंब में 11000 दिखाई दिया। आत्महत्या हुई कुछ परिवार बाबत कर्जा की रकम 1 से 2 लाख रुपए थी तथा बहुसंख्य परिवारों की तरफ रुपए 10000 से 29000 रुपए तक कर्ज बाकी था।

कुल मिलाकर देखा जाए तो बहुसंख्य किसानों की परिस्थिति बिकट तथा दयनीय है। किसानों को मदद करने के दृष्टिकोण से व-हाड के पांच जिले और वर्धा इनमें वर्ष 2006 में सर्वेक्षण किया गया। कुल 8391 खेडेगांव में से 17.64 लाख खातेदारों का निरीक्षण किया गया। इस निरीक्षण में यह दिखाई दिया कि खेती की जमीन बंजर होने के प्रश्न ने 70% किसान को ग्रस्त किया था। 77% प्रतिशत किसान संकट से घिरे हुए थे। इनमें से 25 प्रतिशत किसान गंभीर स्वरूप के संकट में घिरे थे।

समस्या	खातेदार (प्रतिशत)	मद्द की अपेक्षा	खातेदार (प्रतिशत)
बंजरता का प्रश्न	69.5	खेती के साधन	54.8
कर्ज बाजारी	51.1	जोडधंदा	53.6
बेटी की शादी	17.4	बंधारा खेती तला	31.3
गंभीर आजार	5.3	सेंद्रिय खेती के इच्छुक	42.7

संदर्भ : वसंराव नाईक स्वावलंबी मिशन अंतिम विवरण, (संदर्भ : वसंतराव नाईक स्वावलंबी मिशन अंतिम विवरण, अमरावती 15.06.2006)

किसान आत्महत्या के कई कारण दिखाई देते हैं। जिनमें साहूकार और अन्य साख संस्थाओं का कर्जा, उत्पाद का निम्न बाजार मूल्य, कृषि नियोजन की कमी, प्रशासकीय समस्या आदि है। इनके अलावा यह पाया गया है कि, धार्मिक रुढ़ी, परंपराओं के शिंकंजे में किसान फंसा होने के कारण कई सामाजिक समस्याएँ उत्पन्न होकर आत्महत्या को जन्म देती है। फिजूल के परिवारिक खर्च, बेटे-बेटियों की शादी-ब्याह पर होने वाला खर्च, भूमंडलीकरण की प्रक्रिया में मीडिया के द्वारा रखे गए नए मूल्य और परंपरागत मूल्यों में टकराव आदि भी महत्वपूर्ण है। भूमंडलीकरण की प्रक्रिया में प्रत्येक तबके के व्यक्ति की खुशी की धारणा परिवर्तन हो रही है। यह खुशी (Happiness) भौतिक वस्तुओं में (Commodities) ढूंढी जा रही है। ग्रामीण क्षेत्र में बिखरते परिवार, एक दूसरे के प्रति सद्भाव-स्नेहभाव में कमी और कुल मिलाकर जीवन विषय की संकल्पना में परिर्वतन हो रहा है। इन सबका परिणाम किसानों में एक सामूहिक हताशा (Madd frustration) का उत्पन्न होना है। यह स्थितियाँ एक ऐसी अवस्था को जन्म देती है, जिसमें किसान के मन में यह भावना उत्पन्न होती है कि 'मुक्ती' का एकमात्र रास्ता आत्महत्या है।

आत्महत्या :

"किसी व्यक्ति द्वारा अपनी ही जान लेने की क्रिया आत्महत्या कहलाती है।" आत्महत्या केवल व्यक्तिगत अथवा कौटुंबिक घटना नहीं है। प्रसिद्ध समाजशास्त्र इमाईल दुर्खीम ने अपने 'The Suicide' (1897) इस ग्रंथ में सर्वप्रथम आत्महत्याओं का अध्ययन किया। दुर्खिम का यह मानना था कि, आत्महत्याओं का विश्लेषण केवल व्यक्तिगत मनोविज्ञान के आधार पर नहीं किया जा सकता है। आत्महत्या एक सामाजिक तथ्य है, इसलिए आत्महत्याओं के कारण सामाजिक परिस्थितियों में ही खोजे जाने चाहिए। दुर्खिम ने आत्महत्या का विभाजन इस प्रकार से किया है। 1) स्वकेंद्रित आत्महत्या 2) परार्थवादी आत्महत्या 3) प्रमाणक शून्य आत्महत्या ऐसे विभाजन किया है।

इमाईल दुर्खिम इनके समय में यूरोप के परिस्थिति में अद्भुतपूर्व बदल को चलाना मिली थी समाज में आत्महत्याओं का प्रमाण बहुत ज्यादा बढ़ गया था। बढ़ती हुई आत्महत्या उस समाज में चिंतन तथा चिंता का विषय बन गया था और उसके पीछे छिपे कारणों को ढूंढना अभ्यासकों को आवश्यक लगने लगा था। अनेक संशोधकों ने अपने-अपने तरीके से आत्महत्या के कारण सामने लाए। लेकिन दूर्खिम को ऐसे दिखाई दे रहा था कि यह सब कारणी काफी नहीं है। उसका यह विश्वास था कि आर्थिक बदलाव के कारण सामाजिक जीवन में जो परिवर्तन होता है उनसे

आत्महत्याओं का संबंध जरूर होना चाहिए और समाजशास्त्रीय, अनुभव-प्रमाण्यवादी और उपपत्तीशास्त्रीय शोध तंत्र का उपाय करके वह संबंध सिद्ध किया जा सकता है।

दुर्खिम का यह मानना था की आत्महत्या यदि वैयक्तिक होते हुये भी वैसे नहीं रहता। सामाजिक संरचना का परिवर्तन और आत्महत्या की भावना अधिक तीव्र करने के लिए वह कैसे और कहां तक जिम्मेदारी होती है यह देखना चाहिए यह उसको आवश्यक लगा। अध्ययन के दौरान उसके यह समझ में आया की सरजामशाही से औद्योगिक भांडवकशाही में यहां के समाज का जो संक्रमण शुरू हुआ, उस क्रम में समाज में अनेक विघटनकारी शक्तियों ने प्रभाव डाला था। समाज को एक रखने वाली सामाजिक अनुबंध की पकड़ कम हो रही थी। विघटनकारी शक्तियों के प्रभाव के कारण समाज में अराजकता फैली थी। मनुष्य को अकेलापन सता रहा था और उनके समाज जीवन प्रमाणक शुन्य हो गए थे। इस परिस्थिति का परिणाम यह हुआ कि उनमें आत्महत्या की प्रवृत्ति और ज्यादा प्रमाण में दिखाई देने लगी।

दुर्खिम इस निष्कर्ष तक आया था की समाज में से आत्महत्या का प्रमाण तथा आवश्यकता सामाजिक पर्यावरण के स्वरूप पर आधारित होता है। मनुष्य के द्वारा जानबूझकर की जानेवाली क्रिया आत्महत्या होती है। केवल क्षणिक लहर और मानसिक असंतूलन यह कारण आगे करने के

बदले सामाजिक जीवन के अन्य कारणों के साथ आत्महत्याओं का बढ़ने तथा घटने के प्रमाण को समाजशास्त्रीओं ने जोड़ के दिखाना चाहिए। दुर्खिम ने वह परिश्रमपूर्वक किया और यह बताया की समाज के तथा विशिष्टय गटों में जब वहाँ की व्यक्ति सामूहिक 3 दिष्टय पर और सामाजिक प्रमाणों कोपर अपनी निष्टा, एकी की भावना के दृष्टिकोण से आवश्यक उस स्तर पर रख नहीं सकते, को अपनी निष्टा, एकी की भावना के दृष्टीकोण से आवश्यक उस स्तर पर रख नहीं सकते, तब व्यक्ति के नैतिक और मानसिक आरोग्य पर उसका विपरीत परिणाम होता है और ऐसी स्थिति में वह आत्महत्या के लिए प्रवृत्त होता है। दुर्खिम के समय में आत्महत्या का प्रमाण मुख्य करके शहरी उच्च वर्ग में बढ़ा प्रमाण और उसके तथ्यों को देखते उसके निष्कर्ष भारत में आज की परिस्थिति को जैसे के वैसे लागू होंगे ऐसे कोई भी नहीं कह सकता, उसने जो कुछ निरीक्षण किया वह उस वक्त भी विवादय तथा आक्षेपार्ह था। परंतु उसके साथ यह भी सच था की सार्वजनिक हितसबंध और व्यक्तिगत हितसबंध इनमें अंतर्विरोध व्यक्ति के आत्महत्या को जिम्मेदारी माना जाता है। समाज के एकजुट का आत्महत्याओं के साथ विरोधी प्रमाण होता है। परिस्थिति जब खुद के जिम्मेदारी पर मनुष्य को ढकेल देती है, तब समाज में उसको अकेलापन महसूस होता है और उनको आत्मघात करने की इच्छा होती है। सामाजिक कारण में से जो विचार लहरियाँ आती है वह भौतिक शक्ति जैसे वास्तविक होती है और व्यक्ति पर उनका भी उतना

ही प्रभाव होता है। दुर्खिम ने किए विवेचन में जब ऐसे विधान आते हैं उनके आधार पर अपने संभाग में किसानों के आत्महत्याओं का समाजशास्त्रीय अध्ययन किया जा सकेगा।

मार्क्स का यह कहना था कि आत्महत्या यह आधुनिक समाज की सामान्य घटना है। उनके विचार से पूंजीवादी समाज में कामगार उस व्यवस्था से दूर होता जाता है और अकेला पड़ता है, उस वजह से वह आत्महत्या करता है। वाद और आत्महत्या इसकी जडे यह समाज के सामाजिक तथा आर्थिक परिस्थितओं में मार्क्स देखता है। साधारणत: पारंपरिक संस्था व रचना यह पहले मनुष्य को समाज में एक अर्थ स्थान और जीवन जीने का कारण दिया करते थे। परंतू आज व्यतिवाद,स्वातंत्र्य ने पारंपरिक संस्था तथा रचना का आव्हान किया है। अभी सामाजिक संस्था यह मानव विकास के लिए साधन नहीं रही बल्कि मनुष्य खुद का विकास तथा उसके जीवन को अर्थ देने के लिए खुद एक साधन बन गया। इसलिए उत्यरिक बेक आज के समाज को 'रिस्क सोसायटी' ऐसा कहते हैं। ऐसे समाज में आत्महत्या का प्रमाण बढ़ता रहेगा ऐसे दिखाई देता है।

संक्रमणकालीन विपथगामी समाजवास्वत में एकदूजे को बांधके रखनेवाले बंधन इनमें कमतरता आने के कारण बिखरता हुआ समाज जीवन, समूहभाव से दूर होते जा रहे निराधार मनुष्य, कूटुंब-पड़ोसी-गांव जैसे संस्था का तेजी से हो रहा विघटन, धार्मिक क्षेत्र में घुसी हुई राजनीति और सामाजिक जीवन से आत्महत्या प्रतिरोधक वृत्ति-प्रवृत्ति की घट होना

इसके आधार पर किसान आत्महत्याओं का समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से अध्ययन करना आवश्यक है। किसान आत्महत्याओं का प्रमाण आर्थिक धोरण के अमलबजावणी से अचानग बढ़ गया। इसको यागायोग नहीं कहा जा सकता। इन दो घटनाओं में बहुत बड़ा कार्यकारण भाव है। मुक्त स्पर्धा पर आधारित इस घोरण ने ग्रामीण भाग तथा खेती और किसानों की दयनीय अवस्था की है, जो अक्षम्य है। हजारों किसानों की जमीने छीन कर वह जमीन देशी और विदेशी पूंजीपतियों के हाथ देने का षडयंत्र स्पेशल इकॉनॉमिक झोन के स्वरूप में आगे आया। यह इस पक्षपाती धोरण का केवल एक उदाहरण है।

आत्महत्याओं का समाज पर विपरीत परिणाम हो रहा है। किसान की आत्महत्याओं के कारणों की खोज करने वाले बहुत सी योजनाएं एवं कार्यक्रम गुजरे कई साल में प्रसिद्ध हुये। बहुत सी सरकारी योजनाएं एवं कार्यक्रम भी प्रस्तुत किए गए। इससे परिस्थिति में क्या परिवर्तन हुआ? यह शोध का विषय है। ऐसा होते हुए भी इस प्रश्न पर काफी चर्चा हुई और वह प्रश्न सारे जहां के सामने आया, इस वजह से सरकार को कुछ प्रयत्न करना पड़ा। यह सकारात्मक बात है। परंतु किसान की आत्महत्या के बाद उनकी विधवा और बच्चों के भविष्य का प्रश्न कभी भी चर्चा में नहीं आया। परिणामत: सरकार को भी इन सामाजिक प्रश्न का गांभीर्य समझ में नहीं आया। मौसम साथ नहीं देता और सरकार कृषि माल को

भाव नहीं देते, इसके कारण वह किसान कर्जा के चक्रव्यूह में फसाँ तो हमेशा के लिए। उससे बाहर निकलना उसके लिए आसान ही नहीं बल्कि असंभव हुआ। आखिर हताश होकर खुद को मिटाकर इस चक्रव्यूह से वह खुद को निकाल रहा है। परंतु वह किसान के आत्महत्या के बाद उस चक्रव्यूह में फँसी उसकी पत्नी अकेली अनेक समस्याओं का सामना कर रही है।

विधवाओं का सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न है उनके जमीन का। पति की मृत्यु के बाद खेती उनके जीवननिर्वाह का एकमात्र साधन है। उसपर उनके भविष्य की सुरक्षा निर्भर है। ग्रामीण क्षेत्र में जमीन का हक पुरुष के पास होता है। वह मालिकाना हक मिलने के लिए विधवाओं को लड़ना पड़ता है1 वह उनको आसानी से नहीं मिलता। कायदा उनके निकटस्थ होते हुए भी उसके बारे में जानकारी तथा अधिकार के बारे में मालूम न होने के कारण उनको अपने जमीन का हक नहीं मिलता। परिणामत: जीवननिर्वाह का कोन सा भी साधन न होने के कारण उनपर भूखों मरने की नौबत आती है। इसके अनेक उदाहरण विदर्भ के गांव-गांव में देखने के लिए मिलते हैं। इसलिए यह प्रश्न छुड़ाना अत्यंत आवश्यक है। विधवाओं को उनका अधिकार मिलना चाहिए तथा उनको सामाजिक और आर्थिक सुरक्षा भी मिलनी चाहिए।

विदर्भ में किसानों के विधवाओं की संख्या दिन-ब-दिन बढ़ती जा रही है। उसमें सबसे महत्वपूर्ण बात याने उन विधवाओं की उमर है। अनेक

स्त्रियों को कम उम्र में ही विधवा होकर जीवन व्यतीत करना पड़ रहा है। इससे अनेक सामाजिक प्रश्न निर्माण हो रहे हैं और उनके बच्चों के भविष्य का प्रश्न भी निर्माण हो रहा है।

वैसे तो इन विधवाओं के सामने अपना जीवन व्यतीत करते हुए दो विकल्प हैं। एक तो परिस्थिति का सामना करना या फिर परिस्थिती को शरण में जाना। खुद को मिटाकर परिस्थिति के सामने शरण जाकर खुद को मिटाकर वह प्रश्न मिट जाएंगे, पर कल इन बच्चो का क्या होगा? यह प्रश्न उनको शरण नहीं जाने देता। इसलिए बच्चों में घुलमिल गई बच्चों की मां आज उसका पिता बनकर परिस्थिति का सामना कर रही है। विदर्भ के हजारों घरों में यह संघर्ष आज शुरू है।

चूल्हा और बच्चा इतना उनका जीवन होते हुए उनके ऊपर अचानक सब जिम्मेदारी आती है। उसका पति उसका आधार चले जाने से वह स्त्रियाँ मानसिक दृष्टिकोण से तुट जाती है। खुद के हक का घर और जीवननिर्वाह का एकमेव साधन खेती का बहुत बार उनको कब्जा नहीं मिलता। वह स्त्री साक्षर है परंतु सुशिक्षित नहीं, इस वजह से अर्थाजन के लिए खेती के बिना दूसरा पर्याय नहीं होता। यह विधवाओं का सबसे बड़ा प्रश्न है। उनको समाज का भी सामना करना पड़ता है। आज भी हमारे समाज में एक विधवा का जीवन जीना बहुत कठिन है। ऐसे होते हुए भी सबकुछ सहते हुए वह औरतें अपने जीवन से संघर्ष कर रही है। खुद खेती भी कर रही है। वह खुद के अंधेरे भविष्य में अपने जीवन

की राह खोज रही है। कर्जा के चक्रव्यूह उनका पीछा नहीं छोड़ता। यह भी उतना ही सच है। यदि यह परिस्थिति समय पर नहीं सुधारी गई तो उनके सामने भी परिस्थिति को शरण जाने के अलावा दूसरा पर्याय नहीं होगा।

स्त्रियों पर तेहरा बोझ :

आत्महत्या ग्रस्त परिवारों में परिवार की सब जिम्मेदारी उन स्त्रियों पर आती है। पति ने आत्महत्या करने के बाद विधवा स्त्री, एक विधवा करके समाज में उनकी अवहेलना होती है। पति के आत्महत्या का दोष बहुत बार उनको ही दिया जाता है। आत्महत्या का धक्का और दुख सहते हुए उनको समाज का सामना करना पड़ता है। उनके नाम पर उनके पति की जमीन नहीं आती, परंतु कर्ज का बोझा उनके सिर पर आता है। उनके लिए बैंक, साख् संस्थाएं, बीज महावितरण व्यापारी, साहूकार, इनका सामना करना पड़ता है। यदि कुछ अर्थसहाय मिला और कर्ज के फेडने पर कुछ रकम बच गई तो उस पर भी उनके परिवार वालों की आँख रहती है। कभी-कभी तो उनको फसाया भी जाता है। बीमारी, बुढ़ापा इसमें उनका कोई साथ नहीं देता। खेती का सारा बोझा उनके सिर पर आता है। बेटी की शादी, बच्चों की पढ़ाई आदि कई प्रश्न उनको सताते हैं। उनके नाम पर जमीन न होने के कारण अनेक कर्जा मदद योजनाओं का उनको फायदा नहीं मिल पाता । अपने पति की जमीन उनके नाम पर नहीं होती। समाज में कोई स्थान नहीं, संयुक्त परिवार में परिवारवालों का अच्छा बर्ताव न करना, यह सब सहते हुए वे संघर्ष कर रही है। दिनरात मेहनत करके

घर चलाना, बच्चों को पढ़ाने की इच्छा उनमें होते हुए भी काम मिलाने के लिए दरबदर घुमना और मजदूरी करके दिन में सिर्फ 25 रुपए कमाना। इन परिवारों की बेटिओं की सब बाजू से घुटन होती है। उनपर शिक्षा छोड़ने का वक्त आता है। शादी की उमर होने पर भी शादी करना कठिन बन जाता है। परिवार पर बोझा होने की भावना मन में आकर वैफल्यग्रस्त तरुणी भी आत्महत्या करने पर प्रवृत्त होती है। बहुतांश बेटियाँ अपनी माता की मदद जिद से कर रही हैं और विधवा स्त्री भी पर्बत जैसे संकट का सामना कर रही है और खेती तथा परिवार का बोझा अपने सिर पर लेके अपना संसार चला रही है। दिन-रात मेहनत करके, आधा पेट रहके, अपने दु:ख सहते हुए वह बच्चों के भविष्य के आशाओं पर सब परेशानिओं का सामना कर रही है।

आत्महत्याग्रस्त परिवार की प्रत्यक्ष परिस्थिति को समझने के लिए कुछ साक्षात्कार **अखिल भारतीय जनवादी महिला संगठनों** के कार्यकर्ताओं ने लिया प्रत्येक स्त्री की कथा हृदय को स्पर्श करने वाली है :

- दीपाली 10वीं में पढ़ रही थी। किसान आत्महत्या इस विषय पर हुए वक्तृव्य स्पर्धा में उसका पहला नंबर आया था। पिता पर अपने शिक्षा के खर्चा का बोझा नहीं होना चाहिए, शादी की चिंता नहीं होनी चाहिए, शादी के खर्चा का बोझा नहीं होना चाहिए, जीवन भर यह सहते रहने से तो अच्छा है सिर्फ एक बार ही दु:ख होगा, इस भावना से दीपाली ने इस जहाँ को छोड़ दिया।

- मंगलाबाई ने अपने जिद से खेती करने का निश्चय किया। कर्जा का बोझ सिर पर था। पंतप्रधान पैकेज अंतर्गत नया कर्जा मिला। परंतु बी.टी. कपास की फसल डूब गयी और कर्जा का बोझा और बढ़ गया। घर में तीन छोटे बचों, उनको खाने के लिए क्या देंगे -----?
- कर्जा के बोझ के वजह से यमुनाबाई ने आत्महत्या की। पति कायम के लिए बीमार तब यमुनाबाई खुद खेती देखती। परंतु जिन जमीन पति के नाम पर। शासन के प्रति दृष्टिकोण से यमुनाबाई को परीवार अर्थ सहाय के लिए अपात्र ---------- ?
- रंजना के पति के नाम पर तीन एकड़ जमीन परंतु उसने आत्महत्या करने के बाद उसके भाई रंजना के नाम पर जमीन करने के लिए तैयार नहीं हुए। वह पराए घर की स्त्री के नाम जमीन करने को समाज की सहमती नहीं। उल्टा सुदाम के आत्महत्या का दोष रंजना को दिया जा रहा था। दिनभर मजदूरी और घर-काम करती रंजना सारा अपमान सहकर बच्चों की पढ़ाई के लिए जिद से दिन निकाल रही है।
- क्षयरोग से पीड़ित आदिवासी गंगूबाई पति ने आत्महत्या करने के बाद कैसे जी पाएगी।
- नंदा के पति के नाव तीन एकड जमन। उसने एक कुआ और बिजली का पाईप (पंप), कुए में पानी नहीं तो पंप तीन साल से बंद है। परंतु बिजली का बिल बढ़ रहा है। 10,000 रुपयों के बिल का तगादा नंदा के पीछे है। जमीन नाम पर

नहीं, खेती कैसे करेंगे और घर कैसे चलेगा? मजदूरी मिली तो एक वक्त का रवाना मिलेगा, नहीं तो भुरवों मरने की नौबत

अध्ययन की आवश्यकता

विदर्भ के वर्धा जिले में किसान आत्महत्या बड़े पैमाने पर हुई है। किसान आत्महत्याओं का अध्ययन स्तर पर हुआ है। परंतु किसान आत्महत्याग्रस्त परिवारों की विधवा स्त्रियों के प्रश्नों का अध्ययन नहीं हुआ। इस पर ध्यान नहीं दिया। इस वजह से आत्महत्या ग्रस्त किसान परिवारों की विधवा स्त्रियों के प्रश्न समाज के सामने आने चाहिए तथा उसका सामाजिक और आर्थिक दृष्टिकोण से अध्ययन होना चाहिए। इस उद्देश्य से शोधकर्ती ने प्रस्तुत विषय का चुनाव किया है।

अध्ययन विषय :

"किसान आत्महत्याग्रस्त परिवारों की विधवा स्त्रियों की सामाजिक और आर्थिक समस्याओं का अध्ययन"

(विदर्भ के वर्धा जिले के विशेष संदर्भ में)

अध्ययन का उद्देश्य :

1. किसान आत्महत्याग्रस्त परिवारों की विधवा स्त्रियों के अध्ययन के लिए कुछ उद्देश्य निश्चित किए गए। किसान आत्महत्याग्रस्त परिवारों की विधवा स्त्रियों के वैयक्तिक स्थितियों का अध्ययन करना।

2. किसान आत्महत्याग्रस्त परिवारों की विधवा स्त्रियों के कौटुंबिक पार्श्वभूमि का अध्ययन करना।
3. किसान आत्महत्याग्रस्त परिवारों की विधवा स्त्रियों के सामाजिक समस्याओं का अध्ययन करना।
4. किसान आत्महत्याग्रस्त परिवारों की विधवा स्त्रियों की आर्थिक समस्याओं का अध्ययन करना।
5. किसान आत्महत्याग्रस्त परिवारों की विधवा स्त्रियों के मानसिक तणाव का अध्ययन करना।
6. किसान आत्महत्याग्रस्त परिवारों की विधवा स्त्रियों को समाज और सरकार से की जाने वाली अपेक्षाओं का अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकल्पना :

1. किसान आत्महत्याग्रस्त परिवारों की विधवा स्त्रियों में तरुण विधवाओं की संख्या अधिक है।
2. किसान आत्महत्याग्रस्त परिवारों की विधवा स्त्रियों को परिवार के अन्य सदस्यों के अत्याचारों, मनमानी, तानाशाही को झेलना पड़ता है।
3. किसान आत्महत्याग्रस्त परिवारों की विधवा स्त्रियों को अपनी जिम्मेंदारी निभाते हुए मानसिक तनाव का सामना करना पड़ता है।

4. किसान आत्महत्याग्रस्त परिवारों की विधवा स्त्री आर्थिक दृष्टिकोण से अपने कुटुंब पर, जिसमें सास, ससुर, देवर, जेठ पर निर्भर होती है तथा पराधीन होती है।
5. किसान आत्महत्याग्रस्त परिवारों की विधवा स्त्रियों की आर्थिक स्थिति कमजोर होती है।
6. किसान आत्महत्याग्रस्त परिवारों की विधवाओं की तरफ समाज यौन उपभोग तथा शोषण की वस्तु के दृष्टिकोण से देखता है।
7. किसान आत्महत्याग्रस्त परिवारों की विधवा स्त्रियों को सरकार की तरफ से अपेक्षानुसार मदद नहीं मिलती है।

शोधकार्य बाधाएँ :

1. उत्तरदाता वर्धा जिले में फैले होने के कारण उनका संपर्क होने में दिक्कत आयी थी।
2. आत्महत्या यह संवेदनशील मुद्दा होने के कारण स्त्रियों के व्यक्तिगत तथा कौटुंबिक जीवन के बारे में जानकारी मिलने में दिक्कत आई थी।
3. कौटुंबिक तथा सामाजिक दबाव के कारण विधवा स्त्रियों को अपने विचार व्यक्त करते वक्त कुछ बाधा आती है यह दिखाई दिया।